आद्य शंकराचार्य की शिवोपासना

वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, पुराण आदि में शिव-तत्त्व की विविध प्रकार से व्याख्या मिलती है। संत-महात्माओं, आचार्यों, विद्वानों तथा ऋषियों-मुनियों ने विभिन्न युगों में शिव-भक्ति का प्रचार-प्रसार करके जो महनीय कार्य किया है, उसी के द्वारा शिवभक्ति जन-जन में इतनी लोकप्रिय हुई फलस्वरूप आज भी ग्राम-ग्राम में सर्वत्र शिव-मन्दिरों के दर्शन होते हैं। शिवभक्ति के इन प्रचारकों में भगवान् आद्य जगद्गुरु शंकराचार्य का पतित-पावन नाम विशेष उल्लेखनीय है। उन्होंने देश के एक छोर से दूसरे छोरतक भ्रमण करके वेद- शास्त्र-प्रतिपादित सनातनधर्म की पुनः स्थापना की। वे साक्षात् शिव के अवतार हैं-

शंकरः शंकराचार्य सद्गुरुः शर्वसंनिभः।

शंकराचार्य के अनुसार आदिदेव भगवान् शिव पूर्ण परब्रह्म परमात्मा सच्चिदानन्द स्वरूप हैं। वे ही समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त होकर इस जगत् की उत्पत्ति, पालन और संहार आदि करते हैं। वे सत्यस्वरूप, ज्ञानस्वरूप, अनन्त, निर्गुण, निराकार, सगुण, साकार तथा अविनाशी हैं।

श्रीमाधवाचार्य-विरचित 'श्रीशंकरदिग्विजय' में इनके द्वारा बौद्धों को परास्त करने का बड़ा मनोहारी वर्णन हुआ है।

तदनुसार देवगणों ने कैलासपर्वत पर स्थित भगवान् देवाधिदेव महादेव के पास जाकर उन्हें प्रणाम कर बौद्धों के द्वारा वैदिक धर्म को लुप्त करने का वृत्तान्त सुनाया और कहा कि शैव तथा वैष्णव आगम का अनुसरण करनेवाले लोगों ने केवल शरीर पर लिङ्ग(शिवलिङ्ग) और चक्र(सुदर्शनचक्र) आदि चिन्हों को ही धारण करना श्रेयस्कर मानकर शास्त्रोक्त कर्म को छोड़ दिया है। सर्वत्र पाखण्ड मात्र व्याप्त हो गया है, वेद-धर्म विनष्ट हो रहा है, संध्या-वन्दन आदि नित्यकर्मों का लोप होता जा रहा है। इसलिये प्रभो! आप लोकरक्षार्थ समस्त दुष्टों का नाश करके वैदिक मार्ग की स्थापना करें जिससे संसार सुखी हो।

देवताओं की प्रार्थना सुनकर भगवान् शंकर ने कहा कि मैं दुष्ट आचार के नाश के लिये, धर्म की स्थापना के लिये, ब्रह्मसूत्र के तात्पर्य-निर्णायक भाष्य की रचनाकर, अज्ञानमूलक द्वैतरूपी अन्धकार को दूर करने के लिये चार शिष्यों के साथ इस पृथिवी पर यतियों में श्रेष्ठ शंकर के नाम से उत्पन्न होऊँगा। मेरे समान आप लोग भी मनुष्य-शरीर को धारण करें।

तदनन्तर भगवान् शंकर केरल प्रदेश में पूर्णा नदी के पवित्र तट पर ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में स्वयं प्रकट हुए। यहीं राजशेखर नामक राजा ने एक सुन्दर मन्दिर का निर्माण कराकर उनकी पूजा-अर्चना आरम्भ की। उसी मन्दिर के पास स्थित कालटी नामक ग्राम में परम वैदिक विद्वान् शिवगुरु तथा उनकी पत्नी सती रहती थी। इसी ब्राह्मण-दम्पति के यहाँ भगवान् शंकर ने अवतार

लिया। बहुत दिनोंतक पुत्र-प्राप्ति न होने पर शिवगुरु और सती ने वृषक्षेत्र के अधिष्ठाता स्वयम्भू शंकर की तपस्या आरम्भ की, जिससे प्रसन्न होकर भगवान् शिव ने उनके पुत्र-रूप में अवतार लिया। उन्होंने गोविन्द भगवत्पाद से सभी शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त किया। तत्पश्चात् उनकी आज्ञा से काशी जाकर अद्वैत वेदान्त एवं शिवभक्ति का प्रचार-प्रसार करना आरम्भ किया।

आचार्य को काशी-प्रवास में एक बार भगवान् विश्वनाथ का साक्षात् दर्शन हुआ। भगवान् विश्वनाथ ने प्रसन्न होकर उन्हें आशीर्वाद दिया और आज्ञा दी कि वेदान्त-शास्त्रों पर भाष्य की रचना कर सनातनधर्म की रक्षा करो। आचार्य शंकर ने भगवान् विश्वनाथ की इस आज्ञा को शिरोधार्य कर प्रस्थानत्रयी[1] भाष्यों की रचना की और सनातन धर्म के प्रचार-प्रसारार्थ उत्तर में ज्योतिर्मठ, दक्षिण में शृंगेरीमठ, पूर्व में गोवर्धनमठ और पश्चिम में शारदामठ की स्थापना की। सम्पूर्ण देश का भ्रमण कर उन्होंने स्थान-स्थान पर देवमंन्दिरों की स्थापना की और सनातनधर्म की समस्त लुप्त परम्पराओं का पुनरुद्धार किया।

भारतीय शास्त्रों में शिव, सूर्य, विष्णु, गणेश तथा दुर्गा- इन पाँच देवताओं की उपासना का विधान है। आचार्य शंकर ने स्कन्दसहित इन पाँचों की उपासना का प्रचार-प्रसार किया, जिससे वे षण्मत-संस्थापनाचार्य के नाम से प्रसिद्ध हुए। उन्होंने अनेक स्तोत्रों की रचना की, उनमें से कुछ तो भक्तों के कण्ठहार बने हुए हैं, जिनमें शिवभुजंग, शिवानन्दलहरी, शिवपादादिकेशान्तस्तोत्र, वेदसार-शिवस्तोत्र, शिवापराधक्षमापनस्तोत्र, दक्षिणामूर्ति अष्टक, मृत्युञ्जयमानसिक पूजा, शिवनामावल्यष्टक, शिवपञ्चाक्षरस्तोत्र, दक्षिणामूर्तिस्तोत्र, कालभैरवाष्टक, शिवपञ्चाक्षर -नक्षत्रमाला, द्वादशलिङ्गस्तोत्र, दशश्लोकी स्तुति, शिवमानसपूजा तथा शिवाष्टक आदि विशेष उल्लेख्य हैं।[2] इन स्तोत्रों का निरन्तर तथा नियमित रूप से भक्तिपूर्वक पाठ करने से मनुष्य का सर्वविध कल्याण होता है। भगवान् शंकराचार्य ने इन स्तोत्रों की रचना कर जिस शिवभक्ति की धारा को प्रवाहित किया था, वह अजस्त्र रूप से प्रवाहित होती हुई लोगों को शिव-भक्ति की प्रेरणा दे रही है। वर्तमान युग में शिव-भक्ति का जो प्रचार-प्रसार दृष्टिगोचर हो रहा है, वस्तुतः उसका श्रेय आचार्य शंकर को ही है।

शिवावतार शंकराचार्य ने सनातनधर्म का उद्धार करने के लिये अवतार लेकर बदरिकाश्रम में भगवान् विष्णु के श्रीविग्रह की स्थापना की थी। तभी से वहाँ पुनः विधिपूर्वक पूजा-अर्चना का शुभारम्भ हुआ। पुराणों में उनके शिवावतार होने तथा सनातन धर्मोद्धारक के रूप में किये हुए कार्यों

1. उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र एवं श्रीमद्भगवद्गीता को प्रस्थानत्रयी कहा जाता है। आचार्य शंकर ने प्रमुख उपनिषदोंसहित ब्रह्मसूत्र एवं गीता पर अपना भाष्य लिखा है।

2. इन स्तोत्रों के अर्थ पर विचार करने से भगवान् शिव के निर्गुण एवं सगुण दोनों स्वरूपों का स्पष्ट पता चल जायगा। इन स्तोत्रों में से कुछ का उल्लेख इस पुस्तक में किया गया है।

का उल्लेख बार-बार हुआ है।

भगवान् श्रीराम, श्रीकृष्ण तथा श्रीवामन आदि जिस प्रकार भगवान् विष्णु के अवतार होने के कारण साक्षात् नारायण हैं, उनमें और नारायण में कोई भेद नहीं है, उसी प्रकार भगवान् आद्य श्रीशंकराचार्य भगवान् शिव के अवतार होने के कारण साक्षात् शिव हैं। उनमें और शिव में भेद नहीं है। भगवान् आदिदेव श्रीशिव ने इस धराधाम पर उनके रूप में अवतार लेकर वेद-शास्त्रप्रतिपादित सनातनधर्म का उद्धार किया और लोककल्याण के लिये शिवभक्ति का प्रचार-प्रसार किया। इसलिये 'महानुशासन' में आचार्य शंकर का कथन है- 'सत्ययुग में संसार के धर्मगुरु श्रीब्रह्माजी, त्रेता में ऋषि सत्तम, द्वापर में श्रीव्यासजी और कलियुग में मैं(शंकराचार्य) स्वयं हूँ।' अतः उनके धर्मोपदेश का पालन करते हुए शिवाराधना में लगना चाहिये।

अब हम शंकराचार्य के भगवान् शिवसंबंधी विचारों की थोड़ी चर्चा करेंगे। इनके स्तोत्रों में शिव के सगुण एवं निर्गुण दोनों रूपों का वर्णन किया गया है। उदाहरण के लिये 'वेदसारशिवस्तवः' को देखें-

पशूनां पतिं पापनाशं परेशं गजेन्द्रस्य कृत्तिं वसानं वरेण्यम्।
जटाजूटमध्ये स्फुरद्गङ्गवारिं महादेवमेकं स्मरामि स्मरारिम्।।
महेशं सुरेशं सुरारार्तिनाशं विभुं विश्वनाथं विभूत्यङ्गभूषम्।
विरूपाक्षमिन्द्वर्कवह्निनत्रिनेत्रं सदानन्दमीडे प्रभुं पञ्चवक्त्रम्।।
परात्मानमेकं जगद्बीजमाद्यं निरीहं निराकारमोङ्कारवेद्यम्।
यतो जायते पाल्यते येन विश्वं तमीशं भजे लीयते यत्र विश्वम्।।
अजं शाश्वतं कारणं कारणानां शिवं केवलं भासकं भासकानाम्।
तुरीयं तमःपारमाद्यन्तहीनं प्रपद्ये परं पावनं द्वैतहीनम्।।
त्वत्तो जगद्भवति देव भव स्मरारे त्वय्येव तिष्ठति जगन्मृड विश्वनाथ।
त्वय्येव गच्छति लयं जगदेतदीश लिङ्गात्मकं हर चराचरविश्वरूपिन्।।

(वेदसारशिवस्तवः 1, 2, 5, 7, 11)

भावार्थ है-जो सम्पूर्ण प्राणियों के रक्षक हैं, पाप का ध्वंस करनेवाले हैं, परमेश्वर हैं, गजराज का चर्म पहने हुए हैं तथा श्रेष्ठ हैं और जिनके जटाजूट में गंगाजी खेल रही हैं, उन एकमात्र कामारि श्रीमहादेवजी का मैं स्मरण करता हूँ। चन्द्र, सूर्य और अग्नि-तीनों जिनके नेत्र हैं, उन विरूपनयन महेश्वर, देवेश्वर, देवदुःखदलन, विभु, विश्वनाथ, विभूतिभूषण, नित्यानन्दस्वरूप, पंचमुख भगवान् महादेव की मैं स्तुति करता हूँ। जो परमात्मा हैं, एक हैं, जगत् के आदि कारण हैं, इच्छारहित हैं, निराकार हैं और प्रणव द्वारा जानने योग्य हैं तथा जिनसे सम्पूर्ण विश्व की उत्पत्ति और पालन होता

है और फिर जिनमें उसका लय हो जाता है उन प्रभु को मैं भजता हूँ। जो अजन्मा हैं, नित्य हैं, कारण के भी कारण हैं, कल्याणस्वरूप हैं, एक हैं, प्रकाशकों के भी प्रकाशक हैं, अवस्था त्रय से विलक्षण हैं, अज्ञान से परे हैं, अनादि और अनन्त हैं, उन परम पावन अद्वैतस्वरूप को मैं प्रणाम करता हूँ। हे देव! हे शंकर! हे कामारि! हे शिव! हे विश्वनाथ! हे ईश्वर! हे हर! हे चराचर जगद्रूप प्रभो! यह लिंगस्वरूप समस्त जगत् तुम्हीं से उत्पन्न होता है तुम्हीं में स्थित रहता है और तुम्हीं में लय हो जाता है।

शिवोपासना में पंचाक्षरमंत्र (**नमः शिवाय**) का बहुत महत्त्व बताया गया है। इसे सर्वश्रेष्ठ मन्त्र तथा सभी मन्त्रों का सार बताया गया है। इस मन्त्र के पाँचों अक्षरों पर 'शिवपञ्चाक्षरस्तोत्रम्' की रचना भी आचार्य शंकर ने की है। यह स्तोत्र बहुत ही प्रचलित है। आचार्य शंकर की एक अन्य प्रमुख कृति 'शिवानन्दलहरी' है। हम इसमें से भी एकाध उदाहरण प्रस्तुत करेंगे जिससे शिव के स्वरूप पर प्रकाश पड़ता है।

करोमि त्वत्पूजां सपदि सुखदो मे भव विभो
विधित्वं विष्णुत्वं दिशसि खलु तस्याः फलमिति।
पुनश्च त्वां द्रष्टुं दिवि भुवि वहन् पक्षिमृगता –
मदृष्ट्वा तत्खेदं कथमिह सहे शङ्कर विभो।। (23)

भावार्थ है – हे प्रभो! मैं अपनी पूजा का फल आपसे यही चाहता हूँ कि आप मुझे अपने चरणों से कभी अलग न करें। आपके चरणों से दूर रहकर मैं और तो क्या, ब्रह्मा और विष्णु का पद भी नहीं चाहता। क्योंकि ब्रह्मा और विष्णु को भी आपको ढूँढ़ने के लिये क्रमशः हंस और वराह का रूप धारण करना पड़ा, किन्तु फिर भी वे आपका पता न पा सके। वह ब्रह्मा और विष्णु का पद किस काम का जिसमें रहकर आपसे विछोह हो। बाज आया ऐसे बड़प्पन से, मुझे वह नहीं चाहिये। मैं तो छोटे – से – छोटा होकर आपके चरणों में पड़ा रहना चाहता हूँ, कृपया मुझे वहीं स्थान दीजिये।

नालं वा परमोपकारकमिदं त्वेकं पशूनां पते
पश्यन् कुक्षिगतांश्चराचरगणान् बाह्यस्थितान् रक्षितुम्।
सर्वामर्त्यपलायनौषधमतिज्वालाकरं भीकरं
निक्षिप्तं गरलं गले न गिलितं नोद्गीर्णमेव त्वया।। (31)

भावार्थ है – हे पशुपति! आपकी दयालुता का क्या कहना। समुद्र से निकले हुए कालकूट महाविष की प्रलयकारी ज्वालाओं से भयभीत हो देवता लोग जब आपकी शरण आये तो आप दयापरवश हो उस उग्र विष को अपनी हथेली पर रखकर आचमन कर गये। इस प्रकार उसे आचमन तो कर गये, किन्तु उसे मुँह में लेते ही आपको अपने उदरस्थ चराचर विश्व का ध्यान आया और आप सोचने लगे कि जिस विष की भयंकर ज्वालाओं को देवता लोग भी नहीं सह सके, उसे मेरे उदरस्थ

जीव कैसे सह सकेंगे? यह ध्यान आते ही आपने उस विष को अपने गले में ही रोक लिया, नीचे नहीं उतरने दिया। इस प्रकार उस भयंकर विष से देवताओं को ही नहीं, अपितु समस्त चराचर जगत् की रक्षा की। धन्य है आपकी परदुःखकातरता को! इसी से तो आपको 'भूतभावन' कहते हैं। उसी स्वाभाविक दया से प्रेरित हो आप इस विषय-विष से जर्जरित संतप्त हृदय की भी सुध लीजिये और इसे अपने अभय चरणों की सुखद शीतल छाया में रखकर शाश्वत सुख एवं शान्ति का अधिकारी बनाइये।

उपेक्षा नो चेत् किं न हरसि भवद्ध्यानविमुखां
दुराशाभूयिष्ठां विधिलिपिमशक्तो यदि भवान्।
शिरस्तद्वैधात्रं ननु खलु सुवृत्तं पशुपते
कथं वा निर्यत्नं करनखमुखेनैव लुलितम्।। (15)

भावार्थ है– आप मेरा शीघ्र उद्धार नहीं करते, इससे तो यही जाहिर होता है कि आप मेरी उपेक्षा करते हैं, मेरी फरियाद को सुनकर आपके कान पर जूँ भी नहीं रेंगती; नहीं तो भला अबतक मेरी यह हालत रहती? यदि आप कहें कि भाई! हम क्या करें, विधाता ने तुम्हारे करम में यही लिखा है कि तुम हमारे ध्यान से विमुख रहकर दुराशाओं से पूर्ण जीवन व्यतीत करो, तो मैं आपसे यह पूछता हूँ कि क्या आप विधाता के लेख को नहीं मिटा सकते? आप तो, कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुं समर्थ हैं, ब्रह्मा-विष्णु सब कठपुतली की भाँति आपके इशारे पर नाचते हैं। फिर क्या आप मेरे लिये इतना भी नहीं कर सकते? यदि आप कहें कि ब्रह्माजी के आगे मेरी पेश नहीं आती, तो मैं आपसे पूछता हूँ, क्या आप उस दिन को भूल गये जब आपने उनका गोल-गोल पाँचवाँ मुख जो बहुत बढ़-चढ़ कर बातें कर रहा था, बात-की-बात में अपने नख के अग्रभाग से ही कलम कर दिया था और इस प्रकार बेचारे ब्रह्माजी, जो आपकी बराबरी करने चले थे, चतुरानन ही रह गये? बस, यह सब बहानेबाजी रहने दीजिये, मैं इस प्रकार भुलावे में नहीं आने का। अब तो जिस तरह से भी हो आपको मेरा उद्धार करना ही होगा।

(प्रस्तुत लेख गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित कल्याण के 'शिवांक', 'शिवोपासनांक' तथा वहीं से प्रकाशित 'स्तोत्र रत्नावली' पर आधारित है।)

❁❁❁❁❁❁